

श्रमनीति



विभिन्न संगठनों
(AGENCIES)
की भूमिका

खण्ड-३

श्रमनीति - अध्याय - १६

विभिन्न संगठनों (AGENCIES) की भूमिका

प्रस्तावना

राष्ट्रीय श्रम आयोग को भारतीय मजदूर संघ द्वारा प्रस्तुत, "LABOUR POLICY" नामक अंग्रेजी पुस्तक का यह हिन्दी अनुवाद है ।

इस पुस्तक के सभी २० अध्याय अलग-अलग पुस्तिका के रूप में प्रकाशित किये गये हैं । आपात्कालीन स्थिति के अन्तर्गत कारा-वास की अवधि में इस अध्याय का अनुवाद आई० आई० टी० कानपुर के प्राध्यापक डा० भूषणलाल धूपड़ के सहयोग से किया गया है ।

हम उनके प्रति अपना आभार प्रकट करते हैं ।

-रामनरेश सिंह

विभिन्न संगठनों (Agencies) की भूमिका

केन्द्रीय श्रम संगठन

क्योंकि एक महत्वपूर्ण संगठन, जो श्रम क्षेत्र में परिवर्तन लाता है, श्रमिकों का केन्द्रीय संगठन ही है, अस्तु यह विचार करना आवश्यक हो जाता है कि इस संगठन के क्या अधिकार हैं और किस सीमा तक जिम्मेवारियों को निभाने के लिए उस पर निर्भर रहा जा सकता है, ताकि औद्योगिक सम्बन्धों से सम्बन्धित नीतियों और समझौतों के क्रियान्वयन हेतु अथवा प्रशिक्षण और प्रगति सम्बन्धी विषयों के लिए इसके कन्धो पर जिम्मेवारी डाली जा सके। इस प्रश्न पर विस्तार पूर्वक विवेचन करने के पहले हम यहाँ स्व० श्री जी० डी० अम्बेकर द्वारा प्रस्तुत किये गये विचार का उल्लेख करते हैं- 'किसी भी यूनियन को किसी केन्द्रीय संगठन की सम्बद्धता के बिना नहीं रहना चाहिये।' उन्होंने असम्बद्ध यूनियनों को एक गैर जिम्मेदार यूनियन के समूह के मुकाबले में अधिक खतरनाक सोचा था, क्योंकि असम्बद्ध यूनियन राष्ट्रीय स्तर पर किसी भी अनुशासन को पालन करने के लिये तैय्यार नहीं होती। हम उस हद तक नहीं जाना चाहते, परन्तु कुछ हद तक इस आक्रमक भाव की हम प्रशंसा करते हैं। श्रम सम्बन्धी किसी भी राष्ट्रीय नीति को अपनाने के लिये यह अत्यावश्यक है कि हम यूनियन्स को किसी केन्द्रीय संगठन अथवा संगठनों से सम्बद्ध होने के लिये प्रोत्साहन करें। हमारा देश इतना विशाल और विभिन्नता का है और भिन्न भिन्न विरोधी विचारों के कार्यकलाप इतनी गहराई तक तथा बहुमुखी रूप में फैले हैं कि श्रमिकों के ऊपर एक केन्द्रीय संगठन के थोपे जाने से प्रश्न का हल नहीं निकलेगा, हम इस याचिका के 'ट्रेड यूनियन आन्दोलन के इतिहास' के अध्याय में पहले ही प्रस्तुत कर चुके हैं कि भारतीय श्रमिकों ने अभी तक अपना विवेकपूर्ण ट्रेड यूनियन केन्द्र नहीं बनाया है। इसलिये यह अच्छा है कि वर्तमान काल में चल रही पद्धति के अनुसार भिन्न भिन्न केन्द्रीय श्रम संगठनों से स्वेच्छा पूर्वक सम्बद्ध होने

की प्रक्रिया चालू रहनी चाहिये, पर जब तक एक बार किसी विशेष केन्द्रीय श्रम संगठन से यूनियन सम्बद्ध हो जाय, तो उसे उस श्रम संगठन के अनुशामन को मानना चाहिये । इसे किस प्रकार निश्चितता का स्वरूप दिया जा सकता है? और इसको निश्चित किये बिना राष्ट्रीय स्तर पर किसी भी ठोम नीति का विकास सम्भव नहीं है । सर्वसाधारण इसके २ मार्ग हैं-संविधान और हित । यूनियनों अथवा क्षेत्रीय व राष्ट्रीय महासंघों द्वारा कुछ अनिवार्यतायें प्रस्तुत करनी चाहिये, जैसे-यूनियन का सम्बद्ध होना, मतदान के अधिकार में कड़ाई अथवा पदाधि-कारी बनने के लिये योग्यतामें आदि, जिससे कि केन्द्रीय नेतृत्व के निर्णयों व आदेशों के पालन करने हेतु अधिकार के रूप में वे काम करें अथवा दूसरे अर्थ में नीचे से लेकर ऊपर तक के कार्यकर्ता और भिन्न भिन्न पदाधिकारी वर्ग महासंघ के संविधान को यूनियन अनुशासन के केन्द्र बिन्दु के नाते मानें और इस प्रकार महासंघ के निर्देशों को पालन करने की गारन्टी प्रस्तुत करें । महासंघ वित्तीय चित्रण और अनुशासन के सम्बन्ध में सोच सकता है, जिसके अन्तर्गत किसी गलत काम करने वाली-इकाई को सभी प्रकार की वित्तीय और अन्य सहायताओं (जो कानून सम्मत हैं) को बह केन्द्रीय संगठन रोक सकता है, जहां कहीं भी इस प्रकार की स्थिति उत्पन्न हो । यदि सर्वसाधारण प्रक्रिया में यूनियन्स राष्ट्रीय महासंघों से पर्याप्त बड़ी मात्रा में धन प्राप्त कर रही हैं तो इस सहायता के हट जाने की आशंकाके कारण उन यूनियनों द्वारा केन्द्र के निर्देशों को अपनाना तो आवश्यक ही हैं । इसमें कोई सन्देह नहीं है कि केन्द्रीय श्रम संगठनों की बहुसंख्या और विभिन्न समस्याओं पर उनके विचार तथा उनकी क्षमताओं की तुलनात्मक स्थिति--इस प्रकार की अनिवार्यताओं के विरुद्ध अंकुश डालने वाले प्रभाव को कम करेंगे । इस सदर्भ में एक और टिप्पणी भी उल्लेख करने योग्य है; यह हैं ट्रेड यूनियन की वित्तीय स्थिति । ट्रेड यूनियन का कार्य, दिन प्रतिदिन का विषय होने के कारण यूनियन की वित्तीय स्थिति की साधारण दशा इस प्रकार है की है कि धन को इकाई स्तर पर ही रखा जाय । धन एकत्रित करने का केन्द्र बिन्दु हमेशा इकाई ही रहती है ।

साथ ही कुछ सीमा तक पीछे लगने और दबाव डालने पर ही इकाईयां अपनी 'एकत्रित धनराशि से' उल्लेखनीय भाग को देती हैं । केन्द्रीय कार्यालय को चलाने के लिये साधारण सम्बद्धता शुल्क अत्यधिक अल्प होती है यद्यपि केन्द्रीय संगठन भिन्न भिन्न समय पर धन

की वसूली थोपने में कुछ सफल हुये हैं, जो वार्षिक बोनस के समय पर अथवा मांगों की सफलतापूर्वक समझौता होने के पश्चात की जाती हैं, तो भी बहुत से ऐसे उदाहरण हैं जिसमें कि केन्द्रीय संगठनों के केन्द्रीय कार्यालयों से वित्तीय स्थिति में इकाइयां ही अधिक सुदृढ़ हैं। कुछ ऐसी भी घटनायें हैं, जिसमें केन्द्रीय श्रम संगठन वित्तीय सहायता प्राप्त करने के लिये अन्य केन्द्र, जैसे---राजनीतिक अथवा दूसरी एजेन्सियों पर निर्भर करते हैं। बहुत सी ट्रेड यूनियनों के पूर्णकालिक कार्यकर्ता भी उक्त धनराशियों से सहायता प्राप्त करते हैं और जिन्हे इकाइयों के सेवार्थ लगभग निःशुल्क सेवा के लिये लगाया जाता है। ऐसी स्थितियों में इकाइयों को नियंत्रित करना अनुपाततः सरल रहता है, क्योंकि बिशेषता प्राप्त पूर्णकालिक सशक्त कार्यकर्ता इकाइयों की सेवा के आधार पर एक अधिकृत स्थान सरलता से प्राप्त कर लेता है और उसके आधीन यूनियन के लिए उसके शब्द कानून बन जाते हैं। नियंत्रण के इस प्रकार के राजनीतिक प्रभाव स्पष्ट हैं और उसके निश्चित उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है। प्लान्ट स्तर पर रचनात्मक नीति के क्रियान्वयन में इस प्रकार की पद्धति से बहुत से नुकसान भी हैं, इस पद्धति से गुरुआई (वासिज्म) आ जाती है और साधारण श्रमिक यूनियन की नीति बनाने में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित नहीं किया जाता, तब उसमें नीति के बनाने में एक, प्रकार की अरुचि भी उत्पन्न हो जाती है, यूनियन के नेता भी इस विषय में उसके द्वारा ली गई स्थिति की बुद्धिमता अथवा औचित्य के बारे में किसी प्रकार के प्रश्न नहीं होने देना चाहते। भारत में बहुत से ऐसे उदाहरण हैं, जिनमें बहुत से व्यक्तियों ने श्रमिकों की जोर शोर से सेवा करने हेतु ट्रेड यूनियन के कार्य को अपनाया, परन्तु अन्त में वे यूनियन के बॉस अथवा निरंकुश अधिकारी ही बनकर रह गये। घृणा और मांग की शक्तियों को प्रस्तुत कर स्थायी आन्दोलन खड़ा करने की कितनी ही क्षमता ऐसे यूनियन अधि-कारियों (बाश) के पास क्यों न हो, दिन प्रतिदिन के काम में समर्पित सेवा करने के लिये लोगों को वे प्रेरणा नहीं दे सकते। यदि इस प्रकार के नेतृत्व की और अवनति हो जाय ओर बह भाषण बाज, मंचबाज तथा अखबारों में नाम छपवाने वाला पेशेवर आन्दोलनकारी नेता बन जाय तो उसके द्वारा सभी प्रकार के निर्माण का अन्त अवश्यम्भावी है। तब महासंघ का संबिधान और वित्त संयंत्र भी अपनी सीमित मान्यता को खो बैठते हैं और केन्द्रीय श्रम संगठनों के नाम पर जो शेष रह जायगा, वह वास्तव में संगठन नहीं होगा, अपितु एक भग्न जनसमूह अथवा जनता की भीड़ होगी और संगठन के नाम पर केवल एक व्यक्ति ही रह जायगा।

संगठन की सही शक्ति, नेताओं द्वारा कार्यकर्ताओं के साथ व्यक्तिगत और अनौपचारिक व्यवहार सम्बन्धी बातों में निहित है। बस्तुतः नेता को अपने क्षेत्र में एक आदर्श सक्रिय कार्यकर्ता (फील्ड वर्कर) होना चाहिये और आन्दोलन के अगुआ के रूप में उसको खड़ा होना चाहिये। उसे एक आदर्शवादी एवं जुझारू होना चाहिये तथा अपने लोगों के साथ कन्धे से कन्धा लगाकर काम करना चाहिए। उसे अपने सहकारी कार्यकर्ताओं के परिवार में वरिष्ठ मुखिया के रूप में होना चाहिये। केन्द्रीय श्रम संगठन और उससे सम्बन्धित युनियनों के सम्पूर्ण सक्रिय कार्यकर्ताओं को एक - परिवार के रूप में मानना चाहिये, जिसका एक उज्ज्वल चरित्र हो, उन्हें एक दूसरे की विशेषताओं और कमजोरियों को पहचानना चाहिये और दूसरे से घनिष्ठ मित्रता का सम्बंध रहना चाहिये, ताकि एक का परिवार दूसरे के परिवार पर आवश्यकतानुसार निर्भर रह सकें तथा जीवन की समान भावनाओं में हिस्सा बंटा सके, तभी इस प्रकार का एक केन्द्रीय श्रम संगठन के अन्तर्गत सूझ बूझ वाले समूह (मास्टर माइन्ड ग्रुप) ऐसी स्थिति में होंगे कि वे एक सामूहिक नीति के क्रियान्वयन के लिये कार्यकर्ताओं को जुटा सकेंगे। इस प्रकार के वातावरण में सभी सक्रिय कार्यकर्ता और भिन्न भिन्न श्रेणियों के श्रमिक सदस्य स्वाभाविक रूप से नीति-निर्धारण और निर्णय प्रक्रिया में भाग ले सकेंगे और उन पर शब्दसः और भावसः चल सकेंगे। संवैधानिक नियंत्रण और वित्तीय अधिकार के अन्तर्गत चलने वाला कार्यालय अथवा सशक्त व्यक्तियों द्वारा चलाये गये केन्द्रीय कार्यालय कुछ समय तक एक सुव्यवस्थित संगठन के रूप में मायाजाल सदृश्य रहेंगे, परन्तु ज्योंही नीति सम्बन्धी कठिन विषयों को कार्यान्वित करने का प्रश्न उठेगा तो उस संगठन को इसका गम्भीर रूप से सामना करना पड़ेगा और यह शीघ्र ही स्पष्ट हो जायगा कि उनका संगठन केवल मात्र कागजी है अथवा व्यवसायिक (केरियरिस्ट) लोगों का एक झुरमुट है, जिसका श्रमिकों और अपनी इकाइयों पर कोई नियंत्रण नहीं, अथवा वह केवल मात्र आन्दोलनकारियों और तथाकाथित क्रान्तिकारियों की एक सेना है, जिनकी नीति विषयक रचनात्मक उद्देश्यों को तय करने के लिये कोई क्षमता नहीं। इसके विपरीत एक केन्द्रीय श्रमसंगठन, जिसके नेताओं को किमी प्रमुख और केन्द्रीय स्थान पर पाना कठिन हो अथवा उच्चस्तरीय परामर्श हेतु समय लेना मुश्किल जान पड़े। परन्तु जो देश किसी कोने में अपने किसी भी कार्यकर्ता के लिये उपलब्ध हों, जिसका सामाजिक प्रगटीकरण और

भाषण बहुत कम हुये हों, परन्तु वह अनेक हृदयों का विश्वास प्राप्त हो, तो वह श्रम सम्बन्धी राष्ट्रीय- नीति को सही प्रभाव और दिशा देने में अत्यधिक रूप से समर्थ सिद्ध होगा । केन्द्रीय श्रमसंगठनों के लिये गुणात्मक परीक्षाएँ ऊपर लिखित उद्धरणों में समाविष्ट हैं, जो राष्ट्र निर्माण की एजेन्सीज बन सकती है । संगठन के लिये सविधान और वित्त तो केवलमात्र द्वितीय मूल्य अथवा निचली श्रेणी की वस्तु- है । ट्रेड यूनियननिज्म की आन्तरिक शक्ति के रूप में उक्त तथ्यों के आधार पर एक राष्ट्रीय श्रमनीति के व्यवहारिक स्वरूप के कार्य को बनाने के लिये पूर्ण- रूपेण निर्भर करना -एक गलती होगी । नीति निर्धारण के क्षेत्र में श्रम संगठनों की शक्ति और सहयोग पर निर्भर रहने में ऊपर लिखे तथ्यों को न मानने के कारण बहुत सी अन्दरूनी तू तू मैं मैं, जनसमुदाय के विश्वास में कभी और श्रमसंगठनों की क्षमता में विश्वास की कमी खड़ी हो जाती है । यदि हम चाहते हैं कि देश के श्रमिक ट्रेड यूनियन आन्दोलन को चलाने में एक विशेष दिशा को अपनायें जो केन्द्रीय श्रमसंगठनों के परामर्श से बनाये गये हों, तो उन्हें केन्द्रीय श्रम संगठनों के इन वास्तविक अधिकारों के बारे में ठीक रूप से परिचित होना चाहिये । प्रमुखतया श्रमसंगठन, व्यक्तियों का एक स्वतंत्र संगठन है, इसलिये इम सामाजिक संगठन के अधिकारों की प्रकृति राज्य अथवा उद्योग जैसी अधिकृत गठन से भिन्न रहना स्वाभाविक हैं ।

ऊपर लिखित विवेचन हमें एक दूसरे विषय की ओर ले जाती हैं, वह है यूनियन का अर्थ सम्बन्धी विषय । श्रम क्षेत्र के कुछ मित्र यह सुझाव देते हैं कि सशक्त ट्रेड यूनियन आन्दोलन को खड़ा करने के लिए ट्रेड यूनियन की सदस्यता प्रत्येक कर्मचारी के लिए अनिवार्य होनी चाहिये और कानूनी प्राविधान के अन्तर्गत सदस्यता शुल्क पर्याप्त मात्रा में बड़ी होनी चाहिये । इस बिषय में हम बिल कुल विपरीत विचार रखते हैं । हमारा यह दृढ विचार है कि यूनियन की शक्ति व दृढ़ता का आंकलन सदस्यता शुल्क को नियमित रूप से प्राप्त करने के आधार पर नहीं किया जा सकता । यूनियन की वास्तविक शक्ति उसके दिन- प्रतिदिन के व्यवहार से प्रगट होती है और उसके लिए सदस्यता पंजी० अथवा मत से सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है । इसी प्रकार यूनियन की वित्तीय स्थिति भी उसके संवैधानिक चन्दे पर नहीं खड़ी होती, बल्कि अपने ट्रेड यूनियन के उद्देश्य के लिए

श्रमिकों की भक्ति और समर्पण में निहित रहती है। धन को जमा करने के शेष अन्य तरीके यूनियन के कार्य पर दूषित एवं निष्क्रियता वाले प्रभाव डालते हैं। इसलिये हम इस बिचार के हैं कि यूनियन की सदस्यता का आकलन मासिक अथवा त्रैमासिक चन्दे के आधार पर नहीं किया जा सकता और न उसे वास्तविक काम का आधार ही माना जा सकता है। एक श्रमिक के लिये एक यूनियन की स्वेच्छा से सदस्य बनना पर्याप्त माना जाना चाहिये। एकबार नियमित रूप से सदस्य होने पर उस समय तक सदस्य बना रहना मानना चाहिये, जब तक किसी भी एक पक्ष से खुली घोषणा के अन्तर्गत सदस्यता समाप्त नहीं की जाती। एक लम्बे काल तक यूनियन कार्यों में सक्रिय भाग लेने में दुर्लक्ष्य अथवा यूनियन चन्दे के योगदान में दुर्लक्ष्य करना सदस्यता की समाप्ति का एक कारण हो सकता है; परन्तु पाक्षिक योगदान न देने के कारण स्वयं ही सदस्यता के छूट जाने को नहीं माना जाना चाहिये। यूनियन चन्दे के लिये एक निर्धारित दर नहीं होना चाहिये, बल्कि एक स्थायी यूनियन कोष होना चाहिये, जिसमें हर एक सदस्य को योगदान देने के लिये कहना चाहिए, अथवा यह धनराशि जो बह वर्ष प्रति वर्ष अथवा एक निर्धारित अवसर पर अथवा एक नियमित रूप से देने के योग हों, देना चाहिए। इस प्रकार की एकत्रित की गई धनराशि श्रमिकों के वास्तविक ट्रस्ट का रूप धारण करेगी और उनके उत्थान और विकास के लिये सामर्थ्यशाली सहयोगी होगी। केन्द्रीय श्रम संगठन भी इसी प्रकार अपने सम्बन्धित यूनियनों से धनराशि लेगा, जैसा श्रमिक की एक इकाई अथवा परिवार के अन्तर्गत होता है और इस प्रकार सदस्यों को जोड़ने अथवा मिलानेवाली शक्ति को आगे बढ़ायेगा, जो राष्ट्र निर्माण के लिए स्वस्थ और लम्बी अवधि तक टिकने वाली रचनात्मक स्वरूप को बनायेगी। इस कोष का एक पाई भी राजनीतिक उद्देश्य हेतु नहीं देना चाहिये, तभी वह केन्द्रीय श्रम संगठन को एक स्वतंत्र राष्ट्र का प्रभावी और भरोसे वाला अंग बनावेगी।

नियोजक संगठन जैसे जैसे उद्योगसः सौदेबाजी, वेतन मंडल तथा न्यायाधिकरण अच्छी प्रकार से उद्योग को अपनी पकड़ में लेना प्रारम्भ कर रहे हैं, वैसे ही वैसे नियोजकों के सुदृढ़ संगठनों द्वारा अपने सदस्यों पर अधिकार एवम् नियंत्रण की आवश्यकता अधिकाधिक प्रगट हो रही है। वर्तमानकाल में बहुत से वेतन मंडल के निर्णय और

व्यवस्थायें सम्मुख आयी हैं, जिनका अधिकांश नियोजको ने एक या दूसरे आधार पर खुले रूप से उलंघन किया है। समाचार पत्र उद्योग के अधिकांश नियोजकों ने वर्किंग जरनलिस्ट और नानवर्किंग जरनलिस्ट के वेतन मंडल के निर्णयों को लागू करने के सम्बन्ध में अपनी शक्ति के बाहर की बात बतायी है। बैंकिंग उद्योग में भी द्विपक्षीय निर्णय के बहुत से प्राविधानों को कई बैंकों ने प्रशासकीय असुबिधा के आधार पर कार्यान्वित नहीं किया है। यह अवश्य है कि इन घटनाओं की जड़ों की खोज की जाय और एक चिरकालिक हल ढूँढा जाय। वर्तमान परिस्थिति के ३ प्रमुख कारण प्रतीत होते हैं, सर्व प्रथम भिन्न भिन्न नियोजकों के बीच की आपसी संदेह और प्रतिद्वन्द्विता है, जिसके अन्तर्गत व्यवसायिक व्यवहार और वित्तीय स्थिति के बारे में जानकारी के आदान प्रदान के लिये वे तैयार नहीं हैं। दूसरी कठिनाई यह है कि एक उद्योग में सभी नियोजकों की ओर से सौदेबाजी के लिये एक एजेंट की नियुक्त अनिवार्य होती है, ताकि सभी नियोजकों को एक सौदेबाजी में पूर्ण-रूपेण प्रतिनिधित्व करने के लिये आवश्यक निर्देश प्राप्त हो सके अथवा किसी न्यायाधिकरण अथवा वेतन मंडल के सम्मुख पूर्ण बिचार रखने के लिये आवश्यक निर्देश प्राप्त हो सकें किन्तु श्रमिकों के संगठन के समान नियोजकों के संगठनों की एकता भी उसी स्वरूप की है, जिसके अन्तर्गत दूसरे पक्ष को ही दोषी ठहराया जाता है, अतः आदान प्रदान के लिये आवश्यक कठोर स्वानुशासन पूर्णतया अनुपस्थित रहता है। इन परिस्थितियों में औद्योगिक सम्बन्धों की समस्याओं के हल की कोई भी गम्भीर पद्धति सम्भव नहीं है। इस संदर्भ में परिणाम निकालने का मार्ग यह हो सकता है कि सर्व साधारण नीति के अन्तर्गत नियोजकों को औद्योगिक बैठकों में प्रतिनिधित्व के उद्देश्य से ३ समूहों में बाटा जाना चाहिये। वे समूह हैं, लघु - मध्यम और भारी, यह विभाजन कार्यरत पूंजी के आधार पर कारखानों में क्रमशः सख्या के आधार पर, लाभ के आधार पर अथवा किसी और उपयुक्त आधार की जानी चाहिये। इससे उद्योगसः सौदेबाजी की प्रक्रिया में छोटी मछली को बड़ी मछली द्वारा हड़पने की प्रवृत्ति में रुकावट हो सकेगी। नियोजकों के इन ३ स्पष्टतया विभाजन और जहां कहीं आवश्यक हो ग्रामीण और शहरी आधार पर और अधिक विभाजन किया गया तो कर्मचारियों के बिचारों को एक लम्बी अवधि तक प्रभावित कर सकेगी जिसके अन्तर्गत उनकी मांगों और अन्य समस्याओं को प्रस्तुत करने में परिवर्तन हो सकेगा। नियोजकों के श्रेणीबद्ध संगठन तब बार्तालाप के स्तर पर और सौदेबाजी की निर्णायक स्थिति के बिषयों पर

स्वतंत्र रूप से और विश्वास के साथ मुकाबला कर सकेंगे । समझौतों और एवार्डस के उलंघन करने वालों से ये अपने आपको प्रभावी अधिकारों से युक्त सुसज्जित हो सकेंगे । नियोजक संगठनों के अधिकार श्रमिकों के संगठनों से भिन्न होंगे ही, वर्तमान परिस्थिति में उन्हें कानून पर आधारित होना पड़ेगा । उस अबधि तक जब तक कि औद्योगिक परिवार की कल्पना पुनः सर्व व्यापी नहीं हो जाती, इस बिषय पर हम पुनः इसी अध्याय में उल्लेख करेंगे ।

अनुशासन और कुशलता

वर्तमान समय में कर्मचारियों के नीचे से ऊपर तक के कार्यकर्ताओं में अनुशासन और यूनियन नेताओं के गैर जिम्मेदार कार्यों के बारे में हम बहुत कुछ उल्लेख कर चुके हैं । इस संदर्भ में इससे इनकार नहीं किया जा सकता है कि श्रमिक नेताओं का एक वर्ग विशेषतया चीनी तानाशाह माओत्से तुंग के अनुयायी खुले रूप से कार्य स्तरों में सुधार का विरोध कर रहे हैं । जैसा कि ट्रेडयूनियनिज्म पर माओ के आधुनिक बिचार इस प्रकार हैं, 'यदि ५ तत्व धन, कल्याण, उत्पादन, विशेषज्ञ और पद्धति को प्रमुख स्थान प्राप्त होने दिया गया तो सर्वहारा राजनीति कोई स्थान प्राप्त नहीं कर सकती । धन सम्बन्धी ये प्रोत्साहन-अर्थ सम्बन्धी दुर्भावों को झकझोरते हैं, ताकि श्रमिक वर्ग की एकता को तोड़ा जा सके और समाजवादी आर्थिक आधार को दबाया जा सके श्रमिकों, को उत्पादन में डुबो देने की दुर्भावनाओं का अर्थ है उन्हें क्रान्ति और राजनीति से दुर्लक्ष्य कराना, परिणामस्वरूप वर्ग संघर्ष और सर्वहारा की तानाशाही को भुलादेना होगा । और उत्पादन के ऊपर आग्रह उन्हें पूंजीवादी मार्ग पर ले जायगा, ट्रेड यूनियन के नेता, माओ के इन विचारों अथवा इन्हीं के समान बिचारों को अपनाते हैं और निसंदेह रूप से असहयोग की आदतों और बिध्वंशक लड़ाकूपन को प्रोत्साहन करते हैं । इसे वे वर्ग संघर्ष कहते हैं, लड़ाई का अर्थ बरबादी होती है । अनुशासन और कुशलता के राष्ट्र- व्यापी चिन्तन में इस प्रकार के सभी बिषैले तत्वों को राष्ट्र की राजनीतिक और आर्थिक गठनों से उखाड़ फेंकना होगा । औद्योगिक सम्बन्धों के क्षेत्र में वे अपनी प्रक्रिया के आधार पर खेमे गाड़ दिये हैं और श्रमिकों के नैतिक बल पर दूषित प्रभाव डाल रहे हैं तथा उनके जोश को गलत दिशा दे रहे हैं । ऐसा प्रतीत होता है कि बहुत से नियोजक और राजनीतिज्ञ तथा

कुछ राष्ट्रीय श्रमिक नेता भी साम्यवादी आन्दोलन की इस पद्धति को अभी तक नहीं समझा है, जिसमें उत्पादन में अनुशासनहीनता और अकुशलता को प्रोत्साहन मिलता है । इस पद्धति को अपनाने वाले लोगों को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से अलग करना होगा और अनुशासन तथा कुशलता के सुधार के लिये इनके साथ कड़े रूप में व्यवहार करना होगा ।

जब एक बार अधिकाधिक अनुशासन और कुशलता लाने के लिये हम अपने विचारों और व्यवहारों से उनके उक्त प्रभावों को अलग कर देंगे, तब यह स्पष्ट हो जायगा कि सर्वसाधारण भारतीय श्रमिक देश के साधारण नागरिक के मुकाबले में न अधिक न कम अनुशासित है अथवा न अनुशासन हीन ही है, बल्कि वह देश की सर्वसाधारण मनोवैज्ञानिक भूमिका में भाग लेता है और अपने में कोई विशेष प्रश्न नहीं खड़ा करता । अनुशासित जीवन की कमी तो सर्वोच्च पदों पर विराजमान राजनीतिज्ञों व मन्त्रियों से प्रारम्भ होती है, जिनका देश की सेवा के लिये कोई आदर्श दिखाई नहीं देता, तथा जो सत्ता, सम्मान, और स्थान व पद के पीछे दौड़ते हैं । उद्योग में अधिकार का विचार तो तपस्या और कुशलता की क्षमता के आधार पर स्वाभाविक रूप से अधिकृत होना चाहिये, किन्तु उसके स्थान पर बॉसिज्म को बैठाया गया है तथा व्यवसायगत लाभ के सम्मुख औद्योगिक सर्वोच्चता को भुला दिया गया है । जीवन के मूल्यों में परिवर्तन अनिवार्य है । अन्ततोगत्वा उद्योग जनता है और प्रबन्ध व्यवहार, जो दृष्टिकोणों और मान्यताओं के आधार पर उत्पन्न होता है । नियोजकों का दृष्टिकोण वैसा होना चाहिये, जैसा जैन मुनियों ने प्रस्तुत किया है अर्थात् "परिग्रह परिमाण व्रत । " श्रावक गृहस्थ के लिये यह पांचवा शपथ है, जिसके अन्तर्गत अधिकतम धन एवं सम्पत्ति जो एक व्यक्ति को रखनी चाहिये, की सीमा निर्धारित करने का शपथ है और यह अधिक सीमा भी क्या है? जितना एक व्यक्ति का पेट भरने के लिये अनिवार्य है । मनुष्य जीवन के लिये आवश्यक स्वाभाविक व्यवस्था में जो वह अपने पेट भरने मात्र के लिये लेता है, वही मात्र उसकी निजी सम्पत्ति है-

यावद् भ्रियेत जठरं तावद् स्वत्वं हि देहिनाम् ।

अधिकं योऽभिमन्येत स स्तेनो दण्डमर्हति ॥

व्यक्तिगत सम्पत्ति की सीमा के बारे में ये विचार भारतीय विचार के द्वारा पुनः पुनः रखा गया है, जैसे ईशा और अन्य उपनिषदों में तथा भिन्न-भिन्न संवादों में जैसे एक विख्यात सम्बाद 'जनक और सुलभा' के बीच महाभारत के शान्ति पर्व में दिया गया है । आश्रम धर्म की सम्पूर्ण दिशा व व्यवस्था जीवन में अभौतिक प्राप्ति के आधार पर की गई थी जब एक बार इन विचारों को समाज के औपचारिक ढांचे में सुशोभित किया गया, जैसा कि औद्योगिक परि- वार का विचार इसे स्वाभाविक रूप से अंगीकार करता है, तब सम्पूर्ण दृष्टि- कोण में एक आवश्यक परिवर्तन आता है, तब कार्य के फल अपने आपको अर्थ और काम के दो पुरुषार्थों से उठकर शेष दो पुरुषार्थों में परिणित हो जाते हैं । अर्थात् धर्म के द्वारा सम्पूर्ण स्वतन्त्रता और परिपूर्णता प्राप्त कर मोक्ष की प्राप्ति । इस दिशा में भारतीय श्रमिक की स्वाभाविक प्रेरणा गहरी जड़ें पकड़े हुई है । वास्तविक तथ्य यह हैं कि उसकी प्रकृति के सर्वोच्च भाग को या तो पूर्णतः दुर्लक्ष्य किया जाता है अथवा छोटापन प्रदान किया जाता हैं अथवा अमीर और श्री मन्त लोगों की लोभ पूर्ति के लिये उसको सेवा में लाया जाता है । अब भी जब वह ट्रेड यूनियन आंदोलन के उद्देश्य को अपने हाथ में लेता है, तो वह अपने तुच्छ छोटेपन के स्वार्थ के लिये उतना नहीं करता, वह इसको या तो सर्वसाधारण सामूहिकता के हित के लिये करता है अथवा अव्यवस्था "अधर्म" को ठीक करने की इच्छा से करता है, क्योंकि वह यह देखता है कि अधर्म के द्वारा सशक्त लोग धन, सम्पत्ति और सत्ता के दुरुपयोग करते हैं और अपने स्वार्थ हितों की पूर्ति करते हैं । वस्तुतः यह राज्य का कार्य है । दोषी अथवा अधर्मगामी को ढूंढ कर पकड़ने तथा दण्डित करने के नियम का उसे अधिकार है । यह ऐसा देखकर उपयुक्त कानूनी कार्यवाही कर सकता है, ताकि कोई भी सम्पत्ति के लोभ की उस सीमा से अधिक न रखे, जितनी अधिकतम सीमा समाज निर्धारित करता है । ट्रेड यूनियन का काम उसी समय पूरा हो जाता है, जब सरकार को नियोजकों अथवा किसी अधिकारी द्वारा 'धर्म' को दूषित करने का वह संकेत कर दे । वास्तव में भारतीय श्रमिक की सही इच्छायें इसी दृष्टिकोण तक सीमित है, वह धर्म जाति और संस्कृति के अनुशासन की स्थापना में रुचि रखता है । यही वह प्रेरणा है, जिसने भारतीय श्रमिकों के अन्तर्गत सर्वोच्च नेतृत्व को खड़ा किया है । यह वह नेतृत्व है, जिसने स्वयं के हित के लिए अथवा व्यवसायगत (कैरियर) और लाभ के लिये अपना प्रेरणा केन्द्र नहीं बनाया है, बल्कि यह नेतृत्व त्याग भाव से उत्पन्न हुआ है और इसलिये बहुत से लोगों द्वारा भक्तिभाव से अपनाया गया है ।

परन्तु सरकार और अधिक मशीन के प्रशासकों ने भारतीय मजदूर के मनोधर्म के इन उद्देश्यों को कार्यान्वित करने के लिये कोई मार्ग नहीं दिया है। स्व-शासन व अनु-शासन., जो अपने स्वतः से मन में विकसित होना है और जो बाह्य शासन के द्वारा थोपा नहीं गया है, एक पवित्र वेदी की मान्यता देता है, जिसके ऊपर वह बिना किसी हिसाब के अपने आपको समर्पित करता है और अर्पित करता है। इस प्रकार के आज्ञाकारी होने की प्रेरणा और कहीं से उत्पन्न नहीं हो सकती, क्योंकि वह दिशाहीन अधिकारी की बदलती हुयी झुक के अनुसार काम करता है। ठीक ही कहा गया है 'पहले आज्ञा का पालन करो तब आज्ञा करो।' यह न केवल संकुचित अनुशासन अथवा व्यक्तिगत व्यवहार के लिये सत्य है, बल्कि राष्ट्र निर्माण की गतिविधियों के महान कार्य के लिये -भी सत्य है। उद्योग और राज्य के नेताओं को इस वास्तविक धर्म के आदेशों को भक्तिभाव एवं धार्मिक रूप से मानना चाहिये। परिणामस्वरूप श्रमिक स्वाभाविक रूप से अनुदायित्व ग्रहण करेंगे। श्रमिकों को अनुशासन और कुशलता के आदर्शों के लिये जोश दिलाने हेतु हमें पूरे वातावरण को त्याग और समर्पण की भावना से भर देना चाहिये और लोगो को यह दृष्टि देनी भी चाहिये कि इसके बिना वे सुगमता से नष्ट हो जावेंगे और इसका प्रारम्भ जन-समुदाय के लिये ऊपर से शुरू होनी चाहिये, क्योंकि जनता ऊपर के लोगों के दृष्टिकोणों को अपनाती है-

यद् यद् आचरति श्रेष्ठः तद् तदेवेतरो जनः ।

स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनु वर्तते ॥

यही अनुशासन पैदा करने का मार्ग है। उच्चादर्शों का प्रभाव और ऊँचे स्तरों पर आदर्श उत्पन्न करने का भी यही मार्ग है, और कोई अन्य दूसरा मार्ग नहीं है।

मध्य वर्गीय प्रबन्धन

औद्योगिक सम्बन्धों के समूचे क्षेत्र में मध्यम वर्गीय प्रबन्धन और तन्त्रज्ञ की भूमिका एक और केन्द्र बिन्दु है, जिस पर किसी भी राष्ट्रीय कार्यक्रम में उचित ध्यान देना जरूरी है। वस्तुतः यह औद्योगिक गतिविधियों का एक प्रमुख विजय है, दिन प्रतिदिन के प्रशासन में रीढ़ की हड्डी के समान है तथा औद्योगिक जीवन ढांचे की रक्त वाहिनी सदृश्य है।

पूँजीवादी और साम्यवादी जगत के एक योग्य टिप्पणी में यह घोष वाक्य दिया गया है कि इन दोनों पद्धतियों ने पहले से ही एक प्रबन्धकीय राज्य (1 भूमूएअड०[1००० ५८५६) को स्थान दे दिया है, जिसमें दिन प्रतिदिन सम्बन्धी पूरे घटनाक्रम को कार्यकारी प्रभावित करते हैं। प्रबन्धकीय स्तरों जिसमें प्रथम पंक्ति वाले सुपरवाइजर से लेकर उच्चस्तरीय अधिकारी तक हैं उनका स्थान नियोजक कर्मचारी सम्बन्धों में बहुत ही नाजुक स्थिति में है। जब कि वे प्रबन्धक हैं, परन्तु नियोजकों के सामने श्रमिक हैं, क्योंकि अपनी समस्याओं के लिये वे कर्मचारी के रूप में ही हैं और साधारण श्रमिक के मुकाबले में बहुत ही खराब श्रेणी में है। इस नाजुक भूमिका के दुर्लक्ष्य होने से औद्योगिक सम्बन्धों पर बहुत ही निराशा-जनक प्रभाव पड़ते हैं। इस याचिका के दूसरे भागों में हम पहले ही बिचार व्यक्त कर चुके हैं कि उनकी समस्याओं और सम्बन्धों को अन्य कानूनी प्राविधानों के द्वारा अनुशासित होना चाहिये। यह आवश्यक है, परन्तु इतना ही पर्याप्त व उपयुक्त शर्त नहीं है। इस स्तर के व्यावसायिक लोगों के लिए जो इसके अतिरिक्त आवश्यक है, वह है उन्हें लगातार नैपुण्य कार्य-क्रमों द्वारा प्रशिक्षित किया जाना। ताकि जहां एक ओर उनकी सूझ-बूझ का विस्तार हो वहीं दूसरी ओर औद्योगिक नीति बनाने में एक सम्माननीय स्तर भी उन्हें प्राप्त हो। यही वह स्तर है, जहां कार्य के दिन प्रतिदिन सम्बन्धी दृष्टिकोण, औसत कुशलता को बनाये रखने, विकासोन्मुख नीतियों को क्रियान्वयन करने, उद्योग में मानवीय सम्बन्धों को बनाये रखने व बिकास करने आदि के व्यावहारिक स्वरूप धारण करते हैं। सत्ता और जिम्मेवारी का हस्तान्तर, प्रशासन का विकेन्द्रीकरण व एकीकरण, उपभोक्ता का समाधान, लेखा-जोखा का विस्तृत ब्योरा, तकनीकी सम्बन्धी बारीकी व कुशलता, टेकनिकल चतुराई, उत्पादन के दिन प्रतिदिन के लक्ष्यों की प्राप्ति-ये सभी प्रभावी ढंग से प्राप्त करने हेतु उद्योग की प्रबन्धकीय व्यवस्था के इस मध्यमवर्गीय स्तर के व्यवहार पर निर्भर करता है। इसलिये यह वह क्षेत्र भी है, जहां विचारों के विरोधाभासी व विभिन्न पक्षों की नीतियों के विभिन्न प्रकार कई विकल्पों के आग्रह व प्राथमिकता का निर्धारण, वस्तुओं और घटनाओं के समय और स्थान का चतुराई से हिसाब करना-ये सभी गतिविधियाँ एक व्यापक गतिविधियों के समान विचारार्थ प्रस्तुत रहती हैं। खेल की इन पगडंडियों में प्रबन्धकों की विभिन्न शक्तियां अपने भाग्य और आकांक्षाओं, अहंकार व स्वाभिमान और पूर्वग्रहों को रखकर खेलती है, जो विभिन्न प्रकार के सम्बन्धों और विशेषताओं की भंडार है। मनुष्य व्यवहार की

परख और कुशलता इसी स्तर पर अत्यधिक प्रभावी जिम्मेवारी को प्राप्त करता है। इस क्रम में जल्दी-जल्दी सत्ता हस्तान्तरित होती है। यह व्यर्थ नहीं था, जब बादशाह औरंगजेब ने अपनी मृत्यु-शय्या पर यह कहा था, "एक पल में, एक मिनट में, एक श्वास में संसार की परिस्थिति बदल जाती है।" इस स्तर पर इसके छोटे स्वरूप का निरन्तर अनुभव होता रहता है। इस प्रकार के स्थान पर बैठे लोगों के लिये अपने दिन प्रतिदिन के काम में किसी दूसरे व्यक्ति को एक पक्का वादा देने में अत्यधिक कठिन होता है, फिर भी यह वह स्तर है जो समाज के लिये एक स्थायी और निर्भर रहने वाली भूमिका निभा सकती है। यह कठिन कार्य तब तक सम्भव नहीं है, जब तक इस वर्ग के लोगों की क्षमता को निर्माण करने और बनाये रखने के लिये अत्यधिक चिन्ता नहीं की जाती। यहां यह ध्यान में रखना चाहिये कि ट्रेड यूनियन में भी सक्रिय कार्यकर्ताओं और यूनियन स्तर पर के नेताओं का एक समूह प्रबन्धकीय व्यवस्था में रहता है, जो इस प्रकार की कठिनाइयों का लगातार सामना करता रहता है, जब वह अपना ध्यान आन्दोलनात्मक स्वरूप से हटाकर दिन प्रतिदिन की समस्याओं के हल की ओर ले जाता है। जब निम्नलिखित बिषयों से सम्बन्धित शिकायतों में से उठने वाली समस्याएँ उनका ध्यान आकर्षित करती हैं, जैसे किसी भी उचित ट्रेड यूनियन को करने के सम्बन्ध में। तो उन्हें मध्यवर्गीय प्रबन्धक समूह के समान एक मानसिक संस्कृति के विकास की आवश्यकता अनुभव होती है, वे शिकायतें ये हैं-कार्य विषय में परिवर्तन, कार्यभार में परिवर्तन, वरिष्ठता में परिवर्तन, पदोन्नति, स्थानान्तरण, तुलनात्मक बरिष्ठता में परिवर्तन, विभिन्न श्रेणियों व क्षेत्रों के बीच के संघर्षों के समझौते, वेतनों के अन्तरों का निर्धारण, अभिनवीकरण की योजनाओं की स्वीकृति, विभिन्न व्यक्तिगत और सामुहिक मांगों के समाधान की प्रक्रिया, पक्षपातपूर्ण व्यवहार की शिकायतें, अनुशासनीय निर्णयों के मामलों में कटौती, प्रोत्साहन योजनाओं और उत्पादकता सम्बन्धी लक्ष्यों को बनाये रखना तथा व्यक्तिगत व्यवहार से उठने वाले विभिन्न प्रश्न। इसलिये इस संदर्भ में हमें दो सुझाव देने हैं। हमारा पहला सुझाव यह है कि राष्ट्रीय स्तर पर सुपर-वाइजरी प्रशिक्षण और नैपुण्य वर्गों के कार्यक्रमों को बड़े जोश और क्षमता के साथ लिया जाय, ताकि राष्ट्रीय स्तर पर प्रशासकीय व्यवस्था को खड़ा किया जा सके। इन शिक्षा वर्गों में सुपरवाइजर सदृश्य ट्रेड यूनियन नेताओं को भी सक्रिय रूप से भाग लेने के लिये प्रोत्साहन करना चाहिये। इसी प्रकार श्रमिक शिक्षा कार्यक्रमों के अन्तर्गत भी सुपरवाइजर्स के लिये इन कार्यक्रमों को लागू करना करना

चाहिये । और साथ ही हर एक प्रशासक के लिये यह अनिवार्य होना चाहिये कि वह ट्रेड यूनियन काम में उचित प्रशिक्षण प्राप्त करे । इस अभ्यास से आपसी सूझबूझ को प्रोत्साहन मिलेगा । मानसिक विशालता खड़ी होगी और औद्योगिक सम्बन्धों में लगे प्रमुख व्यक्तियों के उस काम के लिये तैयार करेगा, जिनसे, राष्ट्र, उनसे आशा करता है । इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु जनसमुदाय एक जीते जागते स्वरूप में प्रचलन करे तथा प्रबन्धकों और श्रमिकों के विभिन्न स्तरों के बीच की आर्थिक जातिवादिता को भी उसी प्रकार समाप्त करे, जिस प्रकार आज राजनीतिक दलों में नवीन प्रकार की जाति भेद और न छुओ वाली पद्धति को उखाड़ फेकने की आवश्यकता हैं । इस संदर्भ में हमारा दूसरा भी सुझाव है कि उद्योग के स्वामित्व और नियन्त्रण में तकनीकी एवं प्रबन्धक वर्ग का भी एक विशेष प्रतिनिधित्व होना चाहिये । पूंजी और श्रम जैसे दो पक्षों के बीच में तकनीकी और प्रशासकीय लोगों का श्रमिकों के अनुपात में पूरी पूंजी का कम शेयर होने चाहिये साथ ही इसमें से हर एक व्यक्ति का श्रमिक के औसतन शेयर से अधिक होना चाहिये । हमारी यह आशा है कि इन दो पद्धतियों से उद्योग में सभी व्यक्तियों को एक कड़ी के रूप में अथवा एक सामुहिक घेरे में लम्बी अवधि तक बांधने में सहायक होगी और एक दूसरी संस्था, जिसे औद्योगिक परिवार कहेंगे, के विकास में सहायक होगी । महात्मा गांधी कहते थे, "सही सामाजिक अर्थ व्यवस्था हमें सिखायेगी कि श्रमिक, क्लर्क और नियोजक एक अविभाज्य जीवित संस्था के सदस्य हैं, कोई एक दूसरे से छोटा नहीं और बड़ा भी नहीं । उनके आपसी हित संघर्षयुक्त नहीं होने चाहिये, बल्कि समान और अन्योन्याश्रित होने चाहिये । " औद्योगिक सम्बन्धों के तथाकथित दो वर्गों के बीच के सम्बन्ध इतने गहरे हैं कि बहुत से देशों में अधिकांश रूप से यह प्रचलित है कि ट्रेड यूनियन नेता और प्रशासक एक दूसरे का स्थान प्राप्त करते हैं और यह अब अक्सर होता है । हमारे पास समानता और मातृभाव का एक अच्छा सांस्कृतिक पैतृक देन है, तथा यहां देर से औद्योगिकीकरण करने के कारण भी इस सम्बन्ध में लाभ है, क्योंकि पाश्चात्य की कमजोरियों और शिक्षा को हम प्रारम्भ से ही लाभदायक ढंग से प्रयोग कर सकते हैं, जिसके अन्तर्गत ट्रेड यूनियन कार्यकर्ताओं और प्रशासकों की समस्याओं और उपकरणों को अब एक व्यापक आधार पर देखना चाहिये । यही व्यवस्था औद्योगिक परिवार की पद्धति की स्थापना की ओर हमारे कदम को गति देगा ।

औद्योगिक परिवार

भारतीय औद्योगिक परिवार की सर्वप्रथम कल्पना ने नियोजक कर्मचारी सम्बन्धों के अस्तित्व का विचार नहीं किया था। वरन् किसी भी एक वस्तु के उत्पादन अथवा बितरण की प्रक्रियाओं से सम्बन्धित सभी व्यक्तियों को मिलाकर परिवार बनता था। परिवार में हर एक सदस्य को समान स्थान प्राप्त था। वे अपनी कार्य समिति अथवा पंचायत को सर्वसम्मति से चुनते थे और वही परिवार का सामुहिककर्ता था। सभी सदस्यों की सह सहभागीदारी का स्तर प्राप्त था। जहां तक भीतरी प्रशासन अथवा सम्पत्ति सम्बन्धों के प्रश्न थे, हर एक औद्योगिक परिवार स्वायत्तशासी तथा स्वशासित थे। राज्य केवल इनकी भीतरी समस्याओं के सहायतार्थ प्रस्तुत होता था, बह भी उस समय आवश्यक होता था, जब परिवार के सदस्य अथवा उसके अधिकारी स्पष्ट रूप से सहायता मांगें। हर एक औद्योगिक परिवार की दूसरी औद्योगिक परिवारों से व्यवहार करने के लिये अपने प्रकार की स्वतन्त्रता थी। सर्व साधारण के हितों को ध्यान में रखकर राज्य को इन व्यवहारों के नियंत्रण करने का अधिकार था। हर एक परिवार से यह आशा की जाती थी कि वह अपने आपको सम्पूर्ण राष्ट्र के आगामी रूप में स्वीकार करेगा, जिसके कारण व्यवहारिक स्तर पर आपसी समानता, समरसता एकात्मता पैदा होती थी।

आज भारत में कोई भी इस प्रकार का औद्योगिक परिवार नहीं है, नियोजक कर्मचारी सम्बन्ध स्वयं रोजी वाले क्षेत्र के कुछ लोगों को छोड़कर एक प्रकार की स्थिरता को प्राप्त किये हुये हैं, और औद्योगीकरण की प्रक्रिया में प्रबन्धकों और तंत्रज्ञों का एक नया वर्ग भी उभर कर सामने आया है।

नई परिस्थितियों के अन्तर्गत प्रत्येक उद्योग में आन्तरिक स्वायत्तता के मूल सिद्धान्त के आधार पर इन लोगों के ३ प्रकार के वर्गों के लिए पृथक-पृथक औद्योगिक परिवार बनाना आवश्यक होगा। इन तीनों वर्गों को एक औद्योगिक परिवार में इकट्ठा करना तभी सम्भव होगा, जब श्रमिक, प्रबन्धक व तंत्रज्ञ अपने-अपने उद्योग में सह-सहभागीदार बनाये जायेंगे, जो अपने वर्तमान नियोजकों के साथ लाभ व प्रबन्ध में भागीदार ही नहीं होंगे, वरन् उन उद्योगों के स्वामित्व में भी भागीदार होंगे।

श्रमिकों को इन औद्योगिक परिवारों में इकट्ठा करना कम से कम उस समय तक कठिन होगा, जब तक की उनकी ट्रेड यूनियनों को सशक्त नहीं किया जाता और अनुशासन पालन करने के योग्य नहीं बनाया जाता तथा उनके राष्ट्रीय औद्योगिक महासंघ भी यदि समुचित ढंग से संगठित किये गये तो इस प्रकार के औद्योगिक परिवारों की भूमिका निभा सकते हैं ।

हर एक उद्योग में प्रबन्धकों और तन्त्रज्ञों की संस्थाओं के राष्ट्रीय महासंघ, जब संगठित किये जायेंगे तो इस आवश्यकता की पूर्ति हो सकती है, किन्तु वे केवल मात्र विचार व अनुभव के आदान प्रदान तक ही अपने को सीमित न करें तथा इन महासंघों के संदर्भ में वे सभी विषयों को लाये, जो उद्योगों में उनकी भूमिका से जुड़े हुये हैं ।

भिन्न-भिन्न उद्योगों में नियोजकों की संस्थाओं के महासंघ के भी गठन किये जाँय और उनकी कार्यसमिति को वे अधिकार व हक दिये जाय, जो मूलभूत औद्योगिक परिवारों की कार्यसमिति के अधिकार और हकों के समान हों । एक उद्योग में भिन्न-भिन्न नियोजकों द्वारा लगाई गयी सम्पूर्ण पूँजी का प्रबन्ध राष्ट्रीय महासंघ के हाथ सुपुर्द करना चाहिये, जो अपने दायरे के सभी विषयों पर-नीति सम्बन्धी निर्णयों के बनाने और कार्यान्वित करने के उद्देश्य से इस पूँजी को सामान्य औद्योगिक धनराशि के रूप में समझें । नीति सम्बन्धी निर्णय ये हैं-अभिनवीकरण, वेंतन नीति, बोनस, श्रम कानूनों और उनके निर्णय (एवार्ड्स) के क्रियान्वित करना आदि । यद्यपि इस प्रकार के सभी महासंघों को आन्तरिक स्वायत्तता प्रदान हो, किन्तु उनके-लिये यह मान्य होना चाहिये कि वे राष्ट्रीय वित्तीय अनुशासन का पालन करेंगे तथा योजनाओं के लक्ष्य को पूरा करने के लिये उन्हें लेखा जोखा देने होंगे । साथ ही हर नियोजक सदस्य की अपनी पूँजी रखने का अधिकार होगा, उसका प्रबन्ध और क्रियान्वित करने की नीति पूर्णरूप से उसके महासंघ के अधिकार में रहेगा जिसके निर्णय करने में उसे अपने अन्य नियोजक सदस्यों के साथ भाग लेने का अधिकार होगा। किसी नियोजक से सरकार द्वारा सीधी वार्तालाप करने के स्थान पर सरकार केवल उनके महासंघ के साथ ही वार्तालाप कर सकेगी ।

निकट भविष्य के लिये संक्षेप में यही औद्योगिक परिवारों की व्यापक रूप रेखा हमारे द्वारा प्रस्तुत की गयी है । जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, इन तीनों पक्षों को एक में मिलाने के अपने मूलभूत विचार पर हम अधिक लाभकारी होने की आकांक्षा रखते हैं,

जो अपने-अपने उद्योगों में श्रमिकों, प्रबन्धकों व तंत्रज्ञों को स्वामित्व में सह भागीदार बनाने के परिणामस्वरूप होगा। यह आदर्श स्थिति होगी, जिसके लिये हमें प्रयत्न करना है, परन्तु हर उद्योग में इन ३ प्रकार के परिवारों के विचार को कार्यान्वित करते समय के उस परि-वर्तन काल में तदनुसार अल्पकालीन व्यवस्था करनी पड़ेगी।

मूलभूत ढांचे को ध्यान में रखकर हम सभी औद्योगिक परिवारों का सरकार और प्रशासन में व्यवसायगत (पेशे के अनुसार) प्रतिनिधित्व के सिद्धान्तों पर भाग लेने हेतु हमारा मत है। क्षेत्रीय प्रतिनिधित्व की वर्तमान पद्धति के साथ-साथ किस प्रकार इसको अपनाया जायगा, इसकी रूप रेखा बनायी जायगी और क्रियान्वित किया जायगा, जब ये परिवार संगठित होंगे।

इन परिवारों की आन्तरिक स्वायत्तता पर हम पर्याप्त आग्रह करते हैं, परन्तु ये परिवार अपने आपको राष्ट्रीय अनुशासन के अन्तर्गत रखेंगे। अपने अस्तित्व के हक और स्वतन्त्र कानून के अनुसार रहने की विधि स्वनिर्धारित परिवार का जीवनादर्श है। हम एक राज्य की कल्पना करते हैं, जिसका कार्य श्री अरविन्द के शब्दों में "समाज जीवन में अनुचित हस्तक्षेप करना नहीं है और अत्यधिक भाग में उसके प्रकृति व रीति-रिवाज में स्वेच्छित विकास के अनुसार काम करने की अनुमति रहे, इतना ही नहीं बल्कि इसकी स्वाभाविक प्रक्रिया का उसे निरीक्षण करना और सहयोगी होना है और यह देखना, है कि धर्म को जोश खरोश से पालन किया जाता है और साथ ही नकारात्मक रूप में धर्म के विरुद्ध आक्रमण को रोकने के लिए दण्डित और दबाव डालना चाहिये, जितना कि सम्भव हो।"

विशिष्ट जन (बाहरी व्यक्ति)

औद्योगिक परिवार अथवा श्रमिकों के कौन-कौन से अंग हैं? श्रमिक जो एक उद्योग में काम करते हैं, उस उद्योग के पूर्व कर्मचारी हैं और उस उद्योग में ट्रेड यूनियन गतिविधियों में पूरा समय देने वाले कार्यकर्त्ता हैं। ट्रेड यूनियन गतिविधियों के उद्देश्य पूर्ति हेतु बाद वाले दो वर्गों को औद्योगिक परिवार का भाग मानना चाहिये, जबकि उनका सम्पूर्ण कार्य ट्रेड यूनियननिज्म ही हो।

हम इस मत के हैं कि ट्रेड यूनियन आन्दोलन से बाहरी व्यक्तियों को सम्पूर्ण रूप से समाप्त कर देना चाहिये । ट्रेड यूनियन गतिविधियां इन लोगों के लिये चारागाह है, जिसे जितनी शीघ्रता से समाप्त किया जाय, अच्छा होगा, इनकी अनिवार्यता देश में ट्रेड यूनियन संगठन की कमजोरी अथवा पिछड़ेपन की द्योतक है । क्योंकि ट्रेड यूनियन श्रमिकों का संगठन है, श्रमिकों द्वारा है और श्रमिकों के लिये है, परन्तु पूर्व कर्मचारी और पूर्णकालिक कार्यकर्ता जैसे सही ट्रेड यूनियनिस्ट को बाहरी व्यक्ति नहीं मानना चाहिये ।

श्रमिक शिक्षा व प्रशिक्षण

शिक्षा निदेशन (Boards) का कार्य

इस तथ्य को ध्यान में रखकर कि श्रमिकों की शिक्षा की योजना भारत में वर्तमान समय की है और अनोखी है, हम यह अनुभव करते हैं कि इसकी प्रगति की वर्तमान दर संतोषजनक है यद्यपि वर्तमान काल में ये कार्यक्रम स्वायत्तशासी और क्षेत्रीय बोर्डों द्वारा नहीं चलाया जा रहा है, कालान्तर में ट्रेड यूनियन आन्दोलन द्वारा उसके हाथ में लिया जायगा, जैसा कि विशेषज्ञों की समिति ने प्रारम्भ में सिफारिश की थी । योजना का कार्यक्रम बिना किसी कानूनी अधिकार के है और अपने में एक उत्साहजनक और प्रारम्भिक प्रयोग है । यह सत्य है कि यह योजना अभी उपयुक्त रूप से ट्रेड यूनियन की रुझान के अन्तर्गत नहीं है । डा० ए० आर० चार्ल्स, जो अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (I. O. O.) के विशेषज्ञ हैं, का यह सुझाव है कि क्षेत्रीय केन्द्रों पर सक्रिय ट्रेडयूनिय- निस्ट को शिक्षा अधिकारी नियुक्त करना चाहिये अभी क्रियान्वित नहीं हुआ है । बोर्ड की रिक कमेटी का सुझाव जिसमें ट्रेड यूनियनों, राज्य सरकारों, विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों को इस कार्यक्रम में अधिक रुचि के साथ भाग लेने के सम्बन्ध में है और शिक्षा के कार्यक्रम और परिणामों के मूल्यांकन में सीधे दखल देने के सम्बन्ध में है, को उपयुक्त सम्मान नहीं दिया गया, जितना कि दिया जाना चाहिये । बाम्बे समिति भी योजना को बनाने और दिशा देने में अभी सफल नहीं हुयी है । इसके पश्चात भी उपलब्ध समय, शक्ति और धनराशि को ध्यान में रखकर जो अभी तक प्रगति हुयी है, वह प्रशंसनीय है ।

विशेष रूप से आधारभूत संगठनात्मक ढांचा-जो शिक्षाधिरियों, श्रमिक शिक्षकों व प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं को क्रमबद्ध कार्यक्रमों से उत्पन्न करता है, प्राथमिक स्तर पर उद्देश्य पूर्ति अनुकूल है। बम्बई उप समिति द्वारा दी गयी योजना का विस्तृत मापांकन करने में पहले ही देरी हो चुकी है, यह मापांकन, योजना की भविष्य दिशा निर्धारण करने में सहायक होगी। वर्तमान योजना को नमूने के तौर पर परियोजना के अन्तर्गत देखना चाहिये और इसके कार्यान्वित करने में जो त्रुटियां आयेंगी, उसे सीखने और लाभान्वित होने का अवसर प्राप्त हो सकेगी हमारा अनुभव भविष्य काल में गुणात्मक सुधार की ओर दिशा निर्देश करेगा।

अनिवार्य रूप से यह स्वीकार करना चाहिये कि यह योजना इस संदर्भ में अभी तक तो असफल ही रही है, क्योंकि इसके इसने ट्रेड यूनियनिस्ट को आकर्षित नहीं किया है। हम अनुभव करते हैं कि इस योजना से शिक्षित व्यक्ति अनिवार्य रूप से अच्छे ट्रेड यूनियनिस्ट नहीं होंगे, क्योंकि योजना के पाठ्यक्रम ट्रेड यूनियन के रुझान के योग्य नहीं है। ट्रेड यूनियनिस्टों ने बोर्ड द्वारा सहायतार्थ धनराशि को पर्याप्त रूप में नहीं लिया है, जो मुख्यतः योजना के नियमों व शर्तों के कठोरपन के कारण रहा। हमें यह उल्लेख करने में प्रसन्नता हो रही है कि बोर्ड ने इस तथ्य को पहचाना है और ठीक दिशा में कुछ कदम उठाये हैं परन्तु इससे भी अधिक नम्रता और सरलता की कार्यवाही की आवश्यकता है। ट्रेड यूनियनों को अपनी प्रेरणा के आधार पर इस प्रकार के वर्गों को चलाने के लिये प्रोत्साहित करना चाहिये और उन्हें बोर्ड के पाठ्यक्रम, सहायता धनराशि और देख भाल के आधीन करना चाहिये और यदि वे चाहते हैं तो ऐसे वर्ग बोर्ड के शिक्षाधिकारियों की सहायता से चलाना चाहिये तथा सक्रिय और उदीयमान ट्रेड यूनियनिस्ट की सेवायें भी इस योजना के लिये उपलब्ध होनी चाहिये। और इस उद्देश्य पूर्ति के लिये उल्लिखित शैक्षणिक योग्यताओं को निरस्त कर देना चाहिये।

विभिन्न वर्गों के लिये पाठ्यक्रम जो समिति द्वारा अनुमोदित हैं, हम उससे सहमत हैं। वर्तमान संदर्भ में उन विषयों के ऊपर अधिक आग्रह और एकाग्रता, जिनका ट्रेड यूनियन नेतृत्व की आवश्यक गुणों को पैदा करने में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव है, रखनी चाहिये। इसके अनुसार निम्नांकित विषयों पर ध्यान देना चाहिये-उत्पादकता भाव की जागृति; इन तीनों विषयों के लिये प्रमुख स्थान, जैसे- (१) ट्रेड यूनियन्स के उद्देश्य (२) ट्रेड

यूनियन संगठन, प्रशासन और कार्यवाही और (३) ट्रेड यूनियन-प्रबन्ध और सामूहिक सौदेबाजी की समस्याएँ, वर्तमान इकाई पर कक्षाओं, जिनमें एक श्रमिक-शिक्षक के ढांचे पर वर्ग चलाया जाता है, उसे ३ श्रमिक-शिक्षकों द्वारा चलाने हेतु परिवर्तन कर देना, इकाई स्तर पर के वर्ग में अतिथि शिक्षक और शिक्षाधिकारी के भाषणों के लिए आग्रह, श्रमिक-शिक्षकों के लिये नैपुण्य वर्गों की व्यवस्था शिक्षाप्रद फिल्मों की व्यवस्था, फिल्म व चलती फिरती पुस्तकालयों के लिये व्यवस्था, प्रोजेक्ट्स आदि; आकर्षित करने वाले उपकरणों के गुणों व प्रकार में सुधार-फिल्म, चार्टस्स, फ्लेशकार्ड्स, आदि; वर्तमान प्रमुख व महत्वपूर्ण औद्योगिक विषयों के अध्ययन का प्रस्तुतीकरण नमूने के तौर पर बनाये गये शिक्षाप्रद पाठ्यक्रम की तैयारी; उद्योगों के आधार पर श्रमिकों का श्रेणीबद्ध विवेचन; शाप स्टडीवर्ड का तीन स्तरों पर प्रशिक्षण; एक ही उद्योग की यूनियन की कार्य समिति के विशेष प्रशिक्षण के कार्यक्रम, एक ही उद्योग में यूनियन्स के प्रमुख कार्य समिति के सदस्यों के लिये सेमिनार्स और सम्मेलन; यूनियन्स की शाखा इकाई की कार्यसमिति और कार्यसमितियों के प्रमुखों के लिये विशेष प्रशिक्षण के कार्यक्रम आदि ये हमारे द्वारा मान्य की गयीं सिफारिशें हैं । पर हम इस सुझाव से सहमत नहीं हैं कि उन व्यक्तियों, जो श्रमिक शिक्षक बनने वाले हैं और ट्रेड यूनियन के काम में लगने वाले हैं, के लिए भिन्न-भिन्न पाठ्य-क्रम हों । दोनों के लिए केवल एक ही पाठ्यक्रम होने चाहिए, जिसकी अवधि कुछ लम्बी रहे । यदि पाठ्यक्रम की अवधि को बढ़ा दिया गया तो यह भय नहीं होना चाहिए कि प्रशिक्षण के प्रमुख भाग में कमी आयेगी अथवा वह द्वितीय स्थिति को प्राप्त करेगा- । सत्य यह है कि श्रमिकों के शिक्षण प्रशिक्षण की योजना का उद्देश्य-ट्रेड यूनियन आन्दोलन को व्यापक करना तथा उन्हें सशक्त बनाना है, ताकि ट्रेड यूनियन आन्दोलन का रचनात्मक नेतृत्व खड़ा हो सके और जो गतिशील तथा बढ़ती हुयी अर्थव्यवस्था में अपने हकों एवम् जिम्मेदारियों दोनों को ही समझ सके तथा अपने आन्तरिक मामलों के प्रबन्ध में प्रजातांत्रिक नेतृत्व खड़ा हो सके और जो नियोजक, समाज और सरकार के साथ अपने सम्बन्धों में जिम्मेवार हो सके । परन्तु हम श्रमिक-शिक्षक और ट्रेड यूनियनिस्ट के पाठ्यक्रमों के विभाजन की उपयोगिता और ग्राह्यता की प्रशंसा नहीं कर सकते । इस प्रकार के विभाजन ट्रेडयूनियनिस्ट को संकीर्ण मनोवृत्ति और श्रमिक शिक्षकों को केवल मात्र. शास्त्रीय व सैद्धान्तिक विवेचन () तक ही सीमित करेंगे । एक व्यापक कार्यक्रम, जिसे दोनों ही आग्रहपूर्वक अपनाये और एक लम्बे काल तक का हो, ही उचित रास्ता है

। हम बम्बई समिति की सिफारिशों की प्रशंसा करते हैं, परन्तु हम आशा करते हैं कि उसका क्रियान्वयन अनिवार्य रूप से पाठ्यक्रम के विभाजन की ओर नहीं ले जायगा । हम और भी अनुरोध करते हैं कि सामूहिक पाठ्यक्रमों का आयोजन किया जाय, जिसमें ट्रेड यूनियन्स और प्रबन्ध की कार्य समितियों को नीचे से लेकर ऊपर की श्रेणी तक के लोगों को भाग लेना चाहिये तथा उत्पादकता, औद्योगिक मनोबिज्ञान तथा सामूहिक-सौदेबाजी आदि विषयों पर समान दृष्टि कोण रखकर समान पाठ्यक्रम निश्चित किये जाँय ।

ऊपर के स्तर के श्रमिक कार्यकर्ताओं अथवा प्रबन्धकों के लिये सम्बन्धित उद्योग की विशेष आवश्यकताओं के अन्तर्गत पाठ्यक्रमों में परिवर्तन करना चाहिये । हर एक उद्योग के लिये भिन्न पाठ्यक्रमों की तैयारी निश्चित ही कठिन है, परन्तु वह ट्रेड यूनियनिस्ट को रुचिकर बनाने में लम्बी अवधि तक प्रभावित करेगी और प्रबन्धकों के उच्चस्तरीय लोगों के मन में सक्रिय दिलचस्पी पैदा करेगी, चाहे वे उच्च अधिकारी निजी क्षेत्र के हों अथवा सार्व-जनिक क्षेत्र के, हर एक उद्योग में इकाई स्तर पर कक्षायें में चलाने के समय प्रतिदिन के अल्पकालीन अवकाश और अन्य सुविधाओं के प्राविधान करने में उतनी समस्या नहीं होगी, जितनी कि वह आज है । हमें यह मान्य है कि सर्वतोमुखी सहयोग सर्वोच्च ढंग से तभी प्राप्त हो सकता है, जब कक्षाओं के स्वरूप ढांचे के भिन्न भिन्न क्रमों के अनुसार बनाये गये पाठ्यक्रम पर आधारित हो ।

विशेषज्ञों को समिति द्वारा दिये गये सुझाव, जिसके अनुसार अनधिकृत रूप से श्रमिक शिक्षा एसोसियेशन का बनना और प्रौढ़ शिक्षा आन्दोलन से सहयोग प्राप्त करना है, यह एक अच्छा सुझाव है । पर- हम अनुभव करते हैं कि इस योजना को कार्यान्वित करने का अभी उपयुक्त समय नहीं आया है, वह स्थिति आने दी जाय । पहले श्रमिक शिक्षा योजना को अनाधिकारी एजेन्सी को दिया जाय और तत्पश्चात् ट्रेड-यूनियन केन्द्र को दिया जाय, तब जो योजना ट्रेड-यूनियन्स द्वारा बनायी जायगी, एक अच्छी स्थिति में होगी, और जिसके अन्तर्गत स्वेच्छापूर्वक एसोसियेशन्स को बनाने के लिये उत्साह और प्राथमिकता प्राप्त होगी । वर्तमान काल में उस प्रकार का पग उठाना, अपरिपक्वता का

द्योतक होगा। अभी तो कुछ काल तक वर्तमान श्रमिक शिक्षा योजना के संख्यात्मक विस्तार को भी स्थगित कर देना चाहिये और गुणात्मक विकास पर अधिक बल देना चाहिये, जब एक बार छोटी ही मात्रा में क्यों न हो, इस प्रकार की योजना का नमूना परिपूर्ण होकर सामने आवेगा, तब इस नमूने के आधार पर विस्तार करना सरल हो सकेगा। यह समय तो एकत्रित करने व सुधार के लिए है, न कि विस्तार के लिये। जब हम इस संदर्भ में गुणात्मक लक्ष्यों तक पहुँच जायेंगे, तब हम लाभान्वित ढंग से विस्तार की योजना कर सकते हैं। केन्द्रीय प्रशिक्षण संस्थानों का एक श्रमिक विश्वविद्यालय के रूप में विकसित करना, योजना को नमूने के आधार पर तय्यार करके गिनी चुनी ट्रेड यूनियनस को सौंपना, योजना को ट्रेड यूनियन आन्दोलन के हाथों में समूचे रूप से सौंपना, ये वे कदम हैं, जिन्हें बाद में लिया जा सकता है। योजना के लाभों को कृषि और अन्य श्रमिकों तक बढ़ाने के कार्य-क्रम को भी फिलहाल स्थगित किया जा सकता है। जो कुछ भी इस समय हाथ में लिया जा चुका है, उसमें गुणात्मक सुधार के लिये पूर्णरूपेण आग्रह किया जाना चाहिये।

विश्व विद्यालयों और आम संस्थाओं में चलाये जाने वाले ग्रीष्मकालीन श्रम विद्यालय एक प्रशंसनीय विचार है। ट्रेड यूनियन केन्द्रों में श्रमिक शिक्षा के विभागों की स्थापना भी एक सहायक कदम है, परन्तु इन दोनों ही विषयों के लिये श्रम मंत्रालय को प्राथमिकता लेनी चाहिये और कम से कम कुछ भविष्य काल तक के लिये बोर्ड को सुपुर्द नहीं करना चाहिये।

यह स्पष्ट है कि कोई भी दीर्घकालीन श्रमिक शिक्षा के कार्य-क्रम व्यापक सफलता प्राप्त नहीं कर सकते, जब तक की श्रमिकों के बीच से निरक्षरता को पूर्ण-रूपेण दूर नहीं किया जाता। सरकार को भिन्न भिन्न संस्थाओं को प्रोत्साहित करना चाहिये और सहायता देनी चाहिये, ताकि वे इस दिशा के कार्य-क्रमों को गतिशील बना सकें। भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संस्थान का गठन होना ही चाहिये, परन्तु बोर्ड को इस अभियान में प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से सम्मिलित नहीं करना चाहिये। भारत सरकार को इसकी सारी जिम्मेदारी अपने कन्धों पर लेना चाहिये।

हम जिस विषय पर आग्रह करना चाहते हैं-वह है, श्रमिक शिक्षा का विचार। यह विचार बहुत व्यापक है और इस काम को उस स्थान तक, जिसे हम श्रमिक शिक्षा बोर्ड को

सौपना चाहते हैं, सीमित नहीं रखना चाहते । बोर्ड का काम भी महत्व का है, परन्तु श्रमिक शिक्षा के सम्पूर्ण विचार का एक भाग ही उससे सम्बन्धित है, जिसके अनुसार हर श्रमिक को अपने उद्योग में कुशल बनाने के लिये पर्याप्त है, और परिणाम स्वरूप देश का एक आदर्श नागरिक बनाने के योग्य है । इसलिये इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु भिन्न-भिन्न अन्य एजेन्सियों को भी इस कार्य में लाने की आवश्यकता है । यह भारत सरकार की जिम्मेदारी होनी चाहिये कि वह इन एजेन्सी न को इस दिशा में सक्रिय करे ।

कार्य पर श्रमिक का प्रशिक्षण

श्रमिक शिक्षा का एक दूसरा विषय कार्य (ड्यूटी) पर श्रमिक प्रशिक्षण का कार्य-क्रम है, जो हर उद्योग अथवा कारखाने को भी चलाना चाहिये । द्वितीय महायुद्ध के काल में उद्योग के अन्दर कार्य 'करते समय प्रशिक्षण, अल्पकालीन विशेष वर्ग अथवा पुनः प्रशिक्षण के पाठ्यक्रमों आदि की पद्धतियों का प्रशंसनीय विकास हुआ, जिसमें श्रमिक नयी हुनर को प्राप्त कर सके अथवा प्रचलित कुशलता का विकास कर सके । भीषण महायुद्ध के दौरान भी कई प्रकार के ढंग-जैसे कि प्रदर्शनार्थ डाकूमेन्टरी तथा छोटे-छोटे मशीनों के नमूने आदि के माध्यम से प्रशिक्षण दिये गये वे प्रशिक्षण तकनीकी शिक्षा को प्रदान करने हेतु तीव्र और प्रभावी ढंग थे । एक गतिमान विकासशील विश्व के लिये इसी प्रकार के प्रशिक्षण अनिवार्य हैं । पाश्चात्य देशों के ये सभी प्रयोग हवा में नहीं, अपितु व्यावहारिकता की धरती पर किये गये हैं । तकनीकी शिक्षा से सम्बन्धित विज्ञान और तकनीक, की जानकारी साधारण श्रमिक के लिये तकनीकी बारीकियों को बतलाने के लिये ढंग और तकनीकी शोध तथा विकास के लिये उसका रुचि उत्पन्न करने के तरीके आदि प्रयोग जो सभी अच्छाई के लिये है और जिसे आर्थिक दृष्टि से विकसित देशों ने अपने यहाँ लागू किया है, उनकी नकल की जा सकती है । हम पहले ही किसी अन्य स्थान पर उल्लेख कर चुके हैं कि हमें विदेशी तकनीक को संकीर्णता- पूर्ण अविवेक से नहीं अपनाना चाहिये, बल्कि अपनी क्षमता पर तकनीक का बिकास करना चाहिये । परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि हमें वैज्ञानिक स्वभाव के विकास, तकनीकी कुशलता की व्यापकता और विज्ञान के वर्तमान विकाश के लिये अपने जन समुदाय में सम्मान न दे, वरन् उसे दुर्लक्ष्य करें । यह तो आत्म- हत्या के समान गलती करना होगा । पाश्चात्य

देशों ने द्रव्य की विशेषताओं, द्रव्य और ऊर्जा की केमिकल क्रियाओं और प्रक्रियाओं के ढंगों को समझने और उपयोग करने के लिये अध्यात्मिक जिज्ञाशा दिखाई है और उसकी सूक्ष्मता को ध्यान में रख कर उसके सदुपयोग के शास्त्र को धार्मिक ढंग से विकसित किया है । उसने यांत्रिकीय शक्ति के निर्माण और रखरखाव, स्तुति और बढ़ोतरी के लिये विस्तृत धार्मिक क्रिया प्रदान किया है । उसने उस शक्ति की उत्तेजनाओं और भिन्न-भिन्न स्वेच्छाओं का भी अध्ययन किया है और उस देवता (शक्ति) को खुश करने और व्यवस्थित रखने के लिये उसने सभी सावधानियों और देख रेख को लगातार प्रस्तुत किया है । पाश्चात्य देशों के विज्ञान और तकनीकी के बारे में ये सभी धार्मिक जोश खरोश वास्तव में पूर्व के लिये योगदान है । इसे अच्छी प्रकार से अध्ययन करना चाहिये । और अपने हित के लिये अपनाना चाहिये । पाश्चात्य देशों द्वारा इन विकसित विचार और व्यवहारों को श्रमिक के सम्पूर्ण शिक्षा के अन्तर्गत सम्मिलित करना चाहिये ।

इस विषय में हम एक नई और महत्वपूर्ण पहलू जोड़ना चाहेंगे । इसे पाश्चात्य देशों ने भी स्वीकार किया है और श्रमिकों की मनहूसियत को तोड़ने में इसका अत्यधिक उपयोग किया है तथा श्रमिकों को उसके कार्य में अभिरुचि उत्पन्न करता है । बस्तुतः इसमें बहुत बड़े पैमाने पर विकसित करने की क्षमता है । इस पक्ष के अन्तर्गत हर एक श्रमिक को एक परिपूर्ण विचार प्रदान करना है, ताकि उद्योग में अन्य कार्यों के एकीकरण के अन्तर्गत उसके कार्य को महत्व मिल सके । वे अपनी त्रुटियों के सही प्रभावों अथवा गम्भीरता को नहीं समझते, जब तक वे अन्तिम परिणाम की महत्ता और उस अन्तिम परिणाम में उसके काम के योगदान को नहीं देखते । सम्पूर्ण काम के सन्दर्भ में जो उसकी कम्पनी द्वारा उल्लेखनीय प्रकार की वस्तु को पैदा करके बिशेष अच्छाइयाँ उत्पन्न होती हैं, कुल धर्म और जाति धर्म, ये श्रमिक की प्रशिक्षण कार्य-क्रम में वे पक्ष हैं, जिन्हें कार्यस्थल पर प्रशिक्षण की संकीर्ण परिभाषा को स्वीकार करने के अन्तर्गत, आंख से ओझल नहीं होने देना चाहिये । दृष्टिकोण को बदलने से श्रमिक को एक व्यापक दृष्टिकोण मिल सकता है, जो वस्तुतः जीवनदानी हो सकता है, उसके बिना वह केवल शरीर का ढांचा मात्र ही रहेगा । बड़े कारखानों में जहां कार्य का विभाजन और कार्य की विशेषज्ञता होती है कारखानों के स्तर पर इस प्रकार के पक्ष को दुर्लक्ष किया जाता है । यह दुर्लक्षता जन साधारण और

ऊपरी कार्य समिति के बीच उस सीमा तक दूरी उत्पन्न कर देती है, कि वे अपने परियोजना के बारे में इकट्ठा होकर जब बोलते हैं तो वे दो भिन्न भिन्न भावों में बोलते हैं। और एक दूसरे को समझने में असमर्थ रहते हैं। इसलिये कार्य के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु इस प्रकार की सूझ बूझ और सम्पूर्ण योजना में हर बारीकी की महत्ता के लिये कार्यस्थल पर प्रशिक्षण की योजनाओं को आवश्यक रूप से लागू करना चाहिये। इस संदर्भ में तीन श्रमिकों की कहानी बतलायी जाती है, जो पत्थर तोड़ने के एक समान कार्य को कर रहे थे। एक अन्य व्यक्ति द्वारा प्रत्येक श्रमिक से अलग अलग उसके काम की प्रकृति के बारे में प्रश्न पूछे जाने पर पहले गुस्से से उत्तर दिया "क्या तुम देख नहीं रहे हो कि मैं पत्थर तोड़ रहा हूँ?" दूसरे ने दुःखी होकर कहा "और क्या करूँ? अपना पेट भरने के लिये मुझे कुछ तो करना ही पड़ेगा, इसलिये पत्थर तोड़ रहा हूँ।" परन्तु तीसरे मेहनत कश श्रमिक ने बड़े हर्ष के साथ बताया, "हम यहाँ पर एक- सुन्दर मन्दिर बना रहे हैं, अपने जन समुदाय के स्वप्न को साकार करने के लिये यह कार्य कर रहा हूँ।" पहला व्यक्ति उस प्रकार का है जो अपने काम से ही झगड़ा करता है। दूसरे ने अपने को भाग्य पर छोड़ दिया है जब कि तीसरे का भाव ही बस्तुतः सही शिक्षा का निचोड़ है। सभी श्रमिकों के लिये शिक्षा का यह उद्देश्य होना चाहिये कि वे इस तथ्य का महत्वपूर्ण अनुभूति कर सकें कि वे किस प्रकार अपने दिन प्रतिदिन की दिनचर्या की परिपूर्णता से राष्ट्र द्वारा बनाई जा रही राष्ट्रवाद और भारत शक्ति के मन्दिर का निर्माण कर रहे हैं। इस प्रकार तकनीकी और सामाजिक दोनों ही पक्षों में उद्योग का विकास तथा उसमें समृद्धि हो सकती है, और स्थिति कार्यस्थल पर प्रशिक्षण के कार्यक्रम में अपने राष्ट्रीय उद्देश्यों के दृष्टिकोण को अपनाने से प्राप्त हो सकती है। यद्यपि कार्यस्थल पर प्रशिक्षण देने की एजेन्सी उद्योग ही है, किन्तु वह श्रमिकों के तकनीकी प्रशिक्षण के कार्य-क्रम को पूर्ण नहीं बना सकेगा, जब तक कि वह अपने तकनीकी प्रशिक्षण की रूप रेखा में राष्ट्र के व्यापक दृष्टि- कोण का समावेश नहीं करता।

नागरिक के रूप में श्रमिक शिक्षण

श्रमिक शिक्षा की कोई भी योजना पूरी नहीं हो सकती अथवा अपेक्षित परिणाम नहीं ला सकती, जब तक औसतन श्रमिक का स्तर आदर्श नागरिक के रूप में और राष्ट्र के

जिम्मेदार घटक के रूप तक नहीं लाया जाता। औपचारिक शैक्षणिक शिक्षा के बावजूद भी आदर्शवादी दृष्टिकोण और पद्धति का निर्माण करना इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये अनिवार्य है। यह पहले से ही मान्य है कि सभी नागरिक राष्ट्र निर्माण के उद्देश्य को स्वेच्छा से अपनाते हैं और साथ ही उद्देश्य की पूर्ति हेतु सब प्रकार के मूल्य पर पूरी मेहनत करते हैं। केवल इस प्रकार के वातावरण ही श्रमिक को राष्ट्रीय उत्पादन और समृद्धि के लिये सर्वोच्च सम्भव योगदान देने के लिये प्रेरणा दे सकते हैं।

भिन्न भिन्न शैक्षणिक, सामाजिक और सांस्कृतिक संस्थाएँ, जो देश में आज काम कर रही हैं, उन्हें इस काम को अपने हाथ में लेना चाहिये। इन सभी संस्थाओं, जो सामाजिक भूमिका को बनाती हैं, के द्वारा होने वाले केन्द्रित प्रयत्नों का स्वागत करना होगा और यह अवश्यम्भावी भी है। इन संस्थाओं का नाम लेना अथवा गिनना हमारा काम नहीं है, शायद बहुत सी अन्य संस्थाओं को भी स्थापित करना पड़े। हम जो आग्रह करना चाहते हैं, वह यह है कि एक खराब नागरिक एक अच्छा श्रमिक नहीं बन सकता और यह कि श्रमिक से अपनी भूमिका को उसी समय एक आदर्शवादी ढंग से निभाने की आशा की जा सकती है, जब देश का सर्वसाधारण नागरिक अपने दिन प्रतिदिन के मामले में उच्च उद्देश्यों की भावनाओं को अपनाये और प्रकट करें। यह समस्या बहुत व्यापक है, जो देश के वास्तविक नेताओं द्वारा हल किये जाने की प्रतीक्षा में है, चाहे ये नेता कोई भी क्यों न हों।

सफलता का आधार

हर एक बीज अपने फल द्वारा ही पहचाना जाता है। हमने श्रमिक शिक्षा के कई पहलुओं पर विवेचन किया है। इसकी सफलताओं का आधार क्या है?

पिछले विवेचन के अन्तर्गत आधार व्यक्ति है। क्या शिक्षा ने श्रमिक को एक अच्छा व्यक्ति बनाने में सफलता प्राप्त की है? क्या एक अच्छे नागरिक ने अपने आपको राष्ट्र के साथ एकात्म किया है? क्या उद्योग के एक अच्छे प्रोत्साहन कर्ता ने अपने आपको उद्योग के साथ एक रूप किया है? क्या एक अच्छे ट्रेड यूनियनिस्ट ने अपने सहायक कार्यकर्ताओं

के साथ अपने को एक रस किया है? क्योंकि सभी अच्छाइयों का निष्कर्ष अपने आपको व्यापक बनाना और उससे भी बढ़कर अपने को सामाजिक-अंगागी भाव के रूप में समझना है। इसके सर्वोच्च स्वरूप का अर्थ होता है कि वह अपने अस्तित्व को मिटा दे अथवा दूसरे शब्दों में व्यक्ति अपने आपको वैश्विक स्वरूप से एकात्म हो जावे। इस प्रकार के व्यक्ति न केवल अपने आपको बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय के लिये आग्रह करते हैं बल्कि वस्तुतः 'सर्वभूत हितैरतः' होते हैं। वह समाज के साथ पूर्ण रूपेण एक रस हो जाता है और इसलिये मैं नहीं, तू ही के भाव के प्रति समर्पित हो जाता है। उसकी सम्पूर्ण आकांक्षायें दूसरे को सुखी बनाने के लिये होती हैं। अपने ज्वाज ल्यमान पूर्वजों के समान वह भी घोषणा करता है -

न त्वहं कामये राज्यं, न स्वर्गं न पुनर्भवम् ।

कामये दुःखतप्तांनाम प्राणिनामार्तिनाशनम् ॥

"न यह राजनीतिक सत्ता है, न स्वर्ग है और न ही पुनर्जन्म है, जिसके लिये मैं आकांक्षा करता हूँ। मेरी केवल' मात्र आकांक्षा-सभी पीड़ित व्यक्तियों को उनके कष्ट से निवारण करना है।"

भावनाओं में वह राजा शिवि, बुद्ध, महावीर, फादर डामियन, आसीसी के सेन्ट फ्रांसिस अथवा बिबेकानन्द है।

वह एक आदर्श नागरिक है, उद्योग का एक आदर्श प्रोत्साहनकर्ता है, एक आदर्श ट्रेड यूनियनिष्ट है और आदर्श शिक्षा में परिपक्व है। शिक्षा को उसी सीमा तक सफल माना जायगा, जिस सीमा तक वह एक औसत श्रमिक को इस उद्देश्य को समझाने में, उसके लिये प्रयत्न करने और उसकी अनुभूति कराने में सहायक होती है।

॥वन्दे मातरम्॥

Digitised By Swadeshi Vichar Kendra

B-708, Marwar Apartment,
14-E, Chopasani Housing Board,
Jodhpur 342008, Rajasthan

email: thehinduway@gmail.com

mob. 9414126770

ph. 0291-2710123

Please Help the Website By sending us Shradhyaya Dattopant Thengadi's Books,
Audios, Videos, Photos, Letters, Articles, etc.

विनम्र निवेदन

श्रद्धेय दत्तोपन्त ठेंगड़ी जी की पुस्तकें, ऑडियो भाषण, वीडियो, फ़ोटो, लेख, पत्र आदि भेज कर
वेब साईट के लिए सहयोग करें।